SHIKSHA SAMVAD
International Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 2584-0983 (Online)
© Shiksha Samvad|Volume-03| Issue-03| March- 2026
Available online at: https://shikshasamvad.com/
DOI:- https://doi.org/10.64880/shikshasamvad.v3i3.23

वैश्विक पूंजीवाद, सभ्यतागत पहचान और उभरती विश्व-व्यवस्था: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. सन्तराम पाल

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग,
आचार्य नरेन्द्र देव किसान पी. जी. कॉलेज, बभनान, गोंडा(उ.प्र.)

सारांश:

प्रस्तुत शोधपत्र समकालीन वैश्विक समाज में शक्ति-संरचना, सांस्कृतिक पहचान और आर्थिक व्यवस्था के अंतर्संबंधों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। सैमुअल पी. हैटिंगटन के सभ्यतागत संघर्ष सिद्धांत, कार्लमार्क्स के वर्ग-संघर्ष, एमाइल दुर्खीम के संरचनात्मक कार्यात्मकतावाद, मैक्स वेबर के व्याख्यात्मक दृष्टिकोण तथा मिचेल फूको के शक्ति-विमर्श सिद्धांत के आधार पर यह तर्क दिया गया है कि शीतयुद्धोत्तर विश्व में वैचारिक संघर्षों के स्थान पर सांस्कृतिक पहचान, आर्थिक असमानता और ज्ञान-आधारित शक्ति नए संघर्ष-आधार बन गए हैं। तकनीकी तीव्रता और वैश्विक संकट, विशेषतः कोविड-19 ने इन प्रवृत्तियों को और अधिक जटिल बना दिया है।

बीजशब्द: वैश्विक पूंजीवाद, सभ्यतागत पहचान, उभरती विश्व-व्यवस्था, वैश्विक संकट

प्रस्तावना :

वैश्विक सहित युद्ध की समाप्ति ने वैश्विक राजनीति को वैचारिक द्विध्रुवीयता से मुक्त किया किंतु इसके साथ ही एक नया प्रश्न उभरा—संघर्ष का आधार अब क्या होगा? सैमुअल पी. हैटिंगटन का तर्क है कि भविष्य के संघर्ष सभ्यताओं के बीच होंगे, जबकि फ्रांसिस फुकोयामा ने उदार लोकतंत्र को अंतिम चरण मानते हैं। समकालीन परिदृश्य इन दोनों दृष्टिकोणों के बीच एक जटिल वास्तविकता प्रस्तुत करता है। कभी कभी सैमुअल हंटिंगटन की बात सही लगती है। अगर पूंजीवाद और साम्यवाद के दो ध्रुवों की लड़ाई नहीं चल रही हो तो मुल्कों को अपने सदियों पुराने झगड़े-टंटे याद आने लगते हैं। फिर मेरा ईश्वर, तेरा ईश्वर और सिविलाइज़ेशनल ग्रैंड नैरेटिव्स की विमर्श शुरू हो जाती है। आज जब साम्यवादी खेमें में भी एक तरह का पूंजीवाद ही पसरा हुआ है, पूंजीवाद ही एकमात्र विचारधारात्मक शक्ति का स्रोत बन बन चुका है। लोकतंत्र की धन और धनिकों पर जो निर्भरता है उसने एक समानांतर वैश्विक सीक्रीट सोसायटीज बना ली हैं। एपस्टीन आइलैंड उसी की राजधानी बनी। ऐसे ना जाने कितनी राजधानियाँ हैं जहाँ न जाने कितने राज़ छुपाये हुए 'हमराज़' लोग दुनिया पर राज कर रहे हैं। ये कोई नई बात नहीं है। ये दुनिया हमेशा से ऐसी ही रही है। लेकिन कभी-कभी कुछ ज़्यादा ही हो जाता है। जब प्राचीन और आदिम दौर था, तकनीक, सुविधाएं और संपर्क इतना तीव्र नहीं था तब सारे बदमाश धीरे धीरे अपनी हरकतों को अंजाम देते थे, उनकी तीव्रता और स्केल दोनों सीमित होते थे। लेकिन, अब जेट्सपीड का जमाना है। मूर्खता और समझदारी दोनों रॉकेट पर सवार हैं। चूँकि, हम इंसान हैं, इसलिए स्वाभाविक रूप से मूर्खता के पास ज्यादा और कहीं बड़े रॉकेट हैं। इसलिए अब भय भी कहीं ज़्यादा है। और मजे की बात है कि

इस भय की पृष्ठभूमि में बदलाव की संभावना भी ज़्यादा है। पूरे इतिहास में ये बात बिखरी पड़ी है। सबसे बड़े और महत्वपूर्ण बदलाव सबसे बड़े खतरों के मुहाने पर ही होते हैं। इस बात को समझकर कुछ शातिर संगठन और समूह झूठे ख़तरे भी पैदा करते हैं और ख़ास तौर से बाज़ार को बदलने की कोशिश करते हैं।

एक वैश्विक सरकार का विचार विश्वयुद्धों और एटम बम के खतरे से ही उपजा था। लीग ऑफ़ नेशंस या यूनाइटेड नेशंस आज भले ही जिस हालत में हों लेकिन वो विचार अब फिर से ज़िंदा हो रहा है। आज युद्ध के धमाकों और धुएँ के बादलों के बीच इंसानियत फिर से ताजी हवा और शांति को खोज रही है। कई विशेषज्ञों ने कहा है कि इस युद्ध का ईरान या इजराइल के लिए जो भी परिणाम हो, एक बात तय है कि अब वर्ल्ड ऑर्डर बहुत तेज़ी से बदलेगा। निश्चित ही अमेरिका और इज़राइल कमजोर साबित हो रहे हैं। दूसरे छोर पर चीन और रूस की शक्ति या कहें साझी शक्ति, की "बंद मुट्ठी" बहुत कुछ बदल देने वाली है। ये मुट्ठी खुले बिना भी बहुत कुछ करती आई है और करती भी रहेगी, ऐसी उम्मीद प्रबल है। अमेरिका ने मीडिया और फिल्मों के ज़रिए वैश्विक युवा मन में ख़ुद को जिस तरह बसा दिया है उसकी परतें अब उखाड़ रहीं है। एक सामान्य शिक्षित किशोर और युवा अब भारत में भी इस बात से सहमत हो रहा है कि ईरान के साथ ज्यादती हो रही है। ऊपर से पृष्ठभूमि में बनी हुई अमेरिकी विलास और इजराइली दक्षता और अभेद्यता की तस्वीर से आज के ईरान में एक कॉंट्रास्ट नजर आने लगा है। अब सामान्य जन इस बात को मान रहे हैं कि दो ताक़तवर और शातिर मुल्क ईरान को सता रहे हैं।

अब अगर आर्थिक संकट और ऊर्जा संकट बढ़ता है तो सामान्य सहानुभूति में अपनी व्यक्तिगत और पारिवारिक तकलीफ़ का भार भी जुड़ जाएगा। फिर लोग गली-गली में परेशानियों से उबलते हुए अपनी राय रखने लगेंगे। कई देशों में, अपितु स्वयम अमेरिका में ही लाखों लोग सड़क पर उतरे हैं। अमेरिकन एक्ज़ेप्शनलिज़्म और अमेरिका फर्स्ट जैसी मूर्खताओं का असर अब साफ़ नज़र आ रहा है। जब तक गर्मियां हैं यूरोप को थोड़ी राहत है, अगर ये युद्ध और पाबंदियां सर्दियों में आई होतीं तो अब तक पूरा यूरोप कुछ और ही निर्णय ले चुका होता। एक वैश्विक सरकार और कुछ न्यूनतम वैश्विक शिष्टाचार या अनुशासन की जरूरत अब फिर से महसूस हो रही है। जिस गति से वॉर टेक्नोलॉजी, संचार, जेनेटिक इंजीनियरिंग, बायोटेक्नोलॉजी और सबसे ख़तरनाक - आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस आगे बढ़ रहा है, उस रफ़्तार से अब सबको डर लगने लगा है। साइंस फिक्शन अब सिर्फ बुद्धू बक्से या रुपहले पर्दे तक सीमित नहीं रहा, अब हम उसी में जी रहे हैं। सीक्रेट सोसाइटीज और पर्दे के पीछे से काम करने वाले हत्यारे और दुराचारी गिरोह सदियों से इस दुनिया को ना जाने किन किन डोरियों से कठपुतली की तरह नचा रहे हैं।

फिर भी आशंका बनी रहती है। ऐसे खतरे, या इससे बड़े खतरे भी आए हैं, हम सबने कोविड और वैश्विक लॉकडाउन झेला है। इतनी बड़ी घटना के बाद भी कई प्रमुख देशों में नेतृत्व विचित्र व्यक्तित्व वाले नेताओं के हाथ में है। जनता उन्हीं को बार बार चुनकर ले आती है। लेकिन जो भी हो, इस युद्ध ने कोविड के बाद पूरी दुनिया को, ख़ासकर युवा पीढ़ी को ये दूसरा मौक़ा दिया है कि हम पूरी दुनिया को एक डीप इकोलॉजी की तरह देखें। हम सब एक गोल तालाब के किनारे हैं रहते हैं, उसके एक हिस्से में अगर ज़हर घोला जाएगा, कोई बीमारी पैदा की जाएगी तो आज नहीं तो कल वो हमारे मुँह तक पहुँच जाएगी। एक वैश्विक जीवन का, एक साझे जीवन का विचार ऐसे में मुखर होता है। प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद, शीतयुद्ध के दौरान और अन्य समयों में भी ऐसे अनेक आन्दोलन रहे हैं जो वैश्विक निःशस्त्रीकरण की बात उठाते रहे हैं। अब फिर से ये आवश्यकता मुखर हो रही है। बस कुछ प्रमुख राष्ट्रों के नेतृत्व में बदलाव आ जाए तो इस नए दशक की शुरुआत और मध्य में ये जो हमने झेला है इसकी स्मृति कुछ नए सृजन का द्वार खोलने लगेगी।

सैद्धांतिक ढांचा:

संघर्ष सिद्धांत- कार्लमार्क्स के अनुसार- समाज वर्ग-संघर्ष पर आधारित है। वैश्विक पूंजीवाद आर्थिक संसाधनों और शक्ति को सीमित वर्गों में केंद्रित करता है जिससे असमानता और संघर्ष उत्पन्न होते हैं।

© Shiksha Samvad| Received: 03 March-2026 | Accepted: 10 March- 2026 | Published: 15 March- 2026

सभ्यतागत पहचान- सैमुअल पी. हैटिंगटन के अनुसार- सांस्कृतिक और धार्मिक पहचान आधुनिक संघर्षों का प्रमुख स्रोत बनती जा रही है।

शक्ति और विमर्श- मिचेल फूको के अनुसार- शक्ति केवल संस्थागत नहीं बल्कि ज्ञान, भाषा और विमर्श में निहित होती है। मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म वैश्विक "सत्य" का निर्माण करते हैं।

संरचनात्मक प्रकार्यवाद- एमाइल दुर्खीम के अनुसार- समाज एक समेकित प्रणाली के रूप में है जहाँ संस्थाएँ सामाजिक संतुलन बनाए रखती हैं। वैश्विक संस्थाएँ जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ सामाजिक एकता को बढ़ावा देने का प्रयास करती हैं, जबकि युद्ध और महामारी जैसी घटनाएँ असंतुलन उत्पन्न करती हैं जो कभी-कभी नई एकता का कारण भी बनती हैं।

व्याख्यात्मक समाजशास्त्र- मैक्स वेबर के अनुसार- सामाजिक क्रियाओं को उनके अर्थ के संदर्भ में समझना आवश्यक है। सभ्यतागत संघर्ष "अर्थ-निर्माण" की प्रक्रिया समझी जा सकती है जहाँ पहचान, धर्म और इतिहास सामाजिक रूप से निर्मित होते हैं।

वैश्विक पूंजीवाद और असमानता: आधुनिक वैश्विक पूंजीवाद एक जटिल सामाजिक संरचना है, जोसेफ यूजीन स्टिग्लिट्ज़ के अनुसार, यह असमानता को बढ़ाता है, शोशाना ज़ुबॉफ़ के अनुसार, "निगरानी पूंजीवाद" डेटा के माध्यम से नियंत्रण स्थापित करता है। इससे "वैश्विक अभिजात वर्ग" का उदय होता है।

तकनीकी तीव्रता और जोखिम समाज: तकनीकी प्रगति ने समाज को "जोखिम समाज" में बदल दिया है, तीव्र संचार का अर्थ तीव्र प्रतिक्रिया है और वैश्विक नेटवर्क का अर्थ वैश्विक संकट है, यह स्थिति अवसर और खतरे दोनों को समान रूप से बढ़ाती है।

वैश्विक संकट और सामूहिक चेतना: कोविड-19 ने वैश्विक परस्पर निर्भरता को उजागर किया। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, इसने अंतरराष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता को रेखांकित किया। इससे एक "वैश्विक सामूहिक चेतना" का विकास हुआ है।

उभरती बहुध्रुवीय विश्व-व्यवस्था: समकालीन विश्व में शक्ति का विकेंद्रीकरण हो रहा है, अमेरिका का प्रभाव चुनौती में है, नए शक्ति-केन्द्र उभर रहे हैं, यह एक बहुध्रुवीय विश्व-व्यवस्था की ओर संकेत करता है।

वैश्विक शासन और सामाजिक एकता: संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे संस्थान वैश्विक सहयोग का प्रयास करते हैं, किंतु वर्तमान चुनौतियाँ अधिक प्रभावी वैश्विक शासन की मांग करती हैं। यह "वैश्विक सामाजिक अनुबंध" की आवश्यकता को दर्शाता है।

समेकित समाजशास्त्रीय विश्लेषण: इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वर्तमान वैश्विक संघर्ष भू आयामी है जिसके अनेक उपागम है, जैसे- आर्थिक उपागम (कार्लमार्क्स), सामाजिक एकता का उपागम (एमाइल दुर्खीम), अर्थ-निर्माण का उपागम (मैक्स वेबर), शक्ति-विमर्श का उपागम (फूको) और सांस्कृतिक पहचान का उपागम (हंटिंगटन) इत्यादि। इया प्रकार वर्तमान वैश्विक परिदृश्य को इन सभी के संयुक्त प्रभाव के परिणाम के रूप में समझा जा सकता हैं।

निष्कर्ष:

निष्कर्षतः यह स्पष्ट होता है कि समकालीन विश्व एक अत्यंत जटिल-संक्रांति के दौर से गुजर रहा है। जहाँ असमानता, पहचान और तकनीकी परिवर्तन परस्पर जुड़ गए हैं और संकट व अवसर साथ-साथ मौजूद हैं इतिहास यह संकेत देता है कि बड़े परिवर्तन अक्सर बड़े संकटों के समय ही होते हैं। अतः वर्तमान वैश्विक अस्थिरता एक नए, अधिक सहयोगात्मक और समावेशी विश्व-व्यवस्था की संभावना भी प्रस्तुत करती है। बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में जिस 'वैश्वीकरण' को एक समरूप और एकीकृत विश्व बनाने वाले साधन के रूप में देखा गया था, आज वह गंभीर अंतर्विरोधों से घिरा हुआ है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, यह केवल आर्थिक प्रणालियों का खेल नहीं है बल्कि यह मानवीय पहचानों, सामाजिक संरचनाओं और सांस्कृतिक मूल्यों के पुनर्गठन की एक गहरी प्रक्रिया है जिसको निम्नलिखित तीन मुख्य आयामों के माध्यम से समझा जा सकता है:

© Shiksha Samvad| Received: 03 March-2026 | Accepted: 10 March- 2026 | Published: 15 March- 2026

सर्वप्रथम, **वैश्विक पूंजीवाद** ने जहां एक ओर आर्थिक एकीकरण और तकनीकी क्रांति, जैसे- एआई और डिजिटल इकॉनमी को जन्म दिया है। वहीं दूसरी ओर इसने समाज में अभूतपूर्व असमानता और अलगाव को भी बढ़ाया है। पूंजी के अनियंत्रित प्रवाह ने स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं और पारंपरिक सामाजिक सुरक्षा तंत्रों को कमजोर किया है। इसके परिणामस्वरूप, समाजों में एक असुरक्षा का भाव पैदा हुआ है। कार्ल मार्क्स से लेकर समकालीन समाजशास्त्रियों तक ने यह रेखांकित किया है कि पूंजीवाद जब सांस्कृतिक जड़ों को काटता है तो व्यक्ति और समाज अपनी खोई हुई पहचान की तलाश में अधिक संकीर्ण या पारंपरिक पहचानों की ओर लौटते हैं।

दूसरा महत्वपूर्ण बिंदु **सभ्यतागत पहचान** का पुनरुत्थान है। सैमुअल हंटिंगटन के 'सभ्यताओं के संघर्ष' के विचार से इतर समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य यह मानता है कि आज सभ्यतागत पहचानें केवल संघर्ष का जरिया नहीं हैं बल्कि वे वैश्विक पूंजीवाद के समरूपीकरण के खिलाफ एक सांस्कृतिक प्रतिरोध हैं। भारत की 'वसुधैव कुटुंबकम' की अवधारणा हो या चीनी 'तियानक्सिया' हो, या इस्लामी और पश्चिमी मूल्य—ये सभी केवल राजनीतिक नारे नहीं हैं। ये उन गहरे सामाजिक-सांस्कृतिक विश्वासों की अभिव्यक्ति हैं जो आधुनिक समाजों को दिशा दे रहे हैं। आज का समाज यह स्वीकार कर रहा है कि आधुनिक होने का मतलब अनिवार्य रूप से 'पश्चिमीकरण' में लीन होना नहीं है।

तीसरा, इन दोनों के टकराव और समागम से एक नई **उभरती विश्व-व्यवस्था** का जन्म हो रहा है। यह व्यवस्था बहु-ध्रुवीय होने के साथ-साथ बहु-सभ्यतागत भी है। अब शक्ति का केंद्र केवल पश्चिम नहीं रह गया है बल्कि वैश्विक दक्षिण' और पूर्व की सभ्यताएं वैश्विक विमर्श को आकार दे रही हैं। यह नई व्यवस्था अधिक खंडित भी है और परस्पर जुड़ी हुई भी है। समाजशास्त्रीय रूप से यह एक 'वैश्विक समाज' के निर्माण की ओर इशारा करता है जहाँ सार्वभौमिक आर्थिक नियमों और विशिष्ट स्थानीय-सांस्कृतिक पहचानों के बीच लगातार सौदेबाजी चल रही है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि भविष्य की विश्व-व्यवस्था की स्थिरता इस बात पर निर्भर करेगी कि हम वैश्विक पूंजीवाद के आर्थिक तर्कों और विभिन्न सभ्यताओं के सांस्कृतिक आत्मसम्मान के बीच कैसा संतुलन बिठा पाते हैं। यदि वैश्विक आर्थिक प्रणाली केवल संभ्रांत वर्ग के हितों की पूर्ति करती रही और सांस्कृतिक विविधताओं को कुचलती रही तो टकराव अपरिहार्य है। समाजशास्त्र हमें यह दृष्टि देता है कि एक न्यायपूर्ण और शांतिपूर्ण विश्व-व्यवस्था तभी संभव है जब वह आर्थिक समावेशन के साथ-साथ 'सभ्यतागत बहुलवाद' को भी अपने मूल में स्थान दे सकें।

संदर्भ सूची:

1.Huntington, S. P. (1996). The clash of civilizations and the remaking of world order, Simon & Schuster, New York, (pp. 19–39, 207–218).

2.Fukuyama, F. (1992), The end of history and the last man, Free Press, New York, (pp. xi–xx, 45–70).

3.Stiglitz, J. E. (2002), Globalization and its discontents, W.W. Norton, New York, (pp. 3–22, 89–132).

4.Arendt, H. (1951), The origins of totalitarianism, Harcourt Brace, New York, (pp. 323–350).

5.Hayek, F. A. (1944), The road to serfdom. Chicago, University of Chicago Press, (pp. 57–76).

6.Kissinger, H. (2014), World order, Penguin Press, New York, (pp. 1–30, 321–350).

7.Zuboff, S. (2019), The age of surveillance capitalism, PublicAffairs, New York, (pp. 8–25, 173–200).

8.United Nations. (1945), Charter of the United Nations, (Preamble, Articles 1–2).

9.Gaddis, J. L. (2005), The Cold War: A new history, Penguin Press, New York, (pp. 1–25, 225–260).

10.World Health Organization (2020), WHO Director-General's opening remarks on COVID-19. (2020 reports, sections on global response).

© Shiksha Samvad| Received: 03 March-2026 | Accepted: 10 March- 2026 | Published: 15 March- 2026

Cite this Article:
डॉ. सन्तराम पाल,“ वैश्विक पूंजीवाद, सभ्यतागत पहचान और उभरती विश्व-व्यवस्था: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण”*Shiksha Samvad International Open Access Peer-Reviewed & Refereed Journal of Multidisciplinary Research, ISSN: 2584-0983 (Online), Volume 03, Issue 03, pp.203-207, March-2026. Journal URL: https://shikshasamvad.com/*

This is an Open Access Journal / article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License CC BY-NC-ND 3.0) which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited. All rights reserved.

CERTIFICATE

of Publication

This Certificate is proudly presented to

डॉ. सन्तराम पाल

For publication of research paper title

वैश्विक पूंजीवाद, सभ्यतागत पहचान और उभरती विश्व-व्यवस्था: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

Published in 'Shiksha Samvad' Peer-Reviewed and Refereed Research Journal and E-ISSN: 2584-0983(Online), Volume-03, Issue-03, Month March 2026, Impact Factor-RPRI-3.87.

Dr. Neeraj Yadav
Editor-In-Chief

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Executive-chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at: https://shikshasamvad.com/

DOI:- https://doi.org/10.64880/shikshasamvad.v3i3.23